सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा की आत्मा को बदलने वाले मुक्त छन्द की नूतन परम्परा को स्थापित करने वाले, नए–नए प्रयोगों द्वारा काव्य के अभिव्यंजना–कौशल को निखारने और अपने विद्रोही स्वर द्वारा नव–जागरण का संदेश देने वाले क्रान्तिदर्शी महाप्राण निराला का जन्म बंगार के महिषादल राज्य के मेदिनीपुर जिले में 1896 में हुआ था। निराला जी के पूर्वज मूलतः उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव के गढ़कोला गाँव के निवासी थे और खेती–बाड़ी करते थे। निराला जी के पिता पण्डित रामसहाय त्रिपाठी को महिषादल राज्य में नौकरी मिली और वह वहीं स्थायी रूप से बस गए। अनेक धार्मिक अनुष्ठानों के पश्चात् निराला का जन्म हुआ। उनकी माता ने पुत्र–प्राप्ति की कामना से सूर्य का व्रत किया था और संयोग से उनका जन्म भी रविवार को हुआ था, अतः उनका नाम सूर्यकुमार रखा गया। इनकी माँ तीन वर्ष की आयु में ही उन्हें असहाय छोड़कर परलोक सिधार गईं। पिता ने दूसरा विवाह तो नहीं किया, परन्तु निराला को उनसे अपेक्षित स्नेह नहीं मिल पाया। अबोध बालक उनकी डाँट–फटकार और मार–पीट के बीच अड़ोस–पड़ोस की महिलाओं की सहायता से पलता–पनपता रहा। कदाचित् ऐसे वातावरण ने ही उन्हें जिद्दी, चिड़चिड़ा और अक्खड़ स्वभाव का बना दिया। परिस्थितियों के कारण निराला नवीं कक्षा से आगे शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके, पर स्वाध्याय के बल पर उन्होंने बंगला, संस्कृत और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। हिन्दी का अध्ययन तो बाद में उत्तर प्रदेश आने पर आरम्भ हुआ।

तेरह–चौहद वर्ष की आयु में इनका विवाह मनोहरा देवी से हुआ, परन्तु भाग्य में दाम्पत्य सुख नहीं लिखा था। अतः सन् 1918 में इन्फ्ल्यूएंजा से वह चल बसीं। उस समय उनकी दो संतान थीं–एक पुत्री और दूसरा पुत्र। थोड़े दिनों बाद पुत्र की भी मृत्यु हो गई। निष्ठुर विधाता ने उनका यह सम्बल भी छीन लिया। यौवन के द्वार पर पहुंचकर सरोज 19 वर्ष की अवस्था में सन् 1935 में चल बसी। स्वजनों की मृत्यु विशेषतः पुत्री–वियोग के इस दारुण आघात ने उन्हें फक्कड़ और दार्शनिक बना दिया। वह जीवन–भर आर्थिक कष्टों में पिसते रहे। उनकी इस अन्तर्व्यथा का संकेत उनके काव्य में अनेक

स्थलों पर मिलता है। 'सरोज–स्मृति' में वह लिखते हैं–

दुःख ही जीवन की कथा रही,

क्या कहूँ आज जो नहीं कही।

एक अन्य स्थान पर उनकी वेदना निम्न शब्दों में फूट पड़ी है–

रेत–सा तन रह गया है,

स्नेह निर्झर बह गया है।

सचमुच निराला की जीवन–गाथा दुःखपूर्ण थी, परन्तु घोर संकट और आर्थिक विपन्नता के कारण उनका स्वाभिमान कभी पराजित नहीं हुआ, दूसरों के प्रति उदारता और वदान्यता में कमी नहीं हुई। पुत्री की मृत्यु के उपरान्त वह कुछ विक्षिप्त से अवश्य हो उठे, पर साहित्य–साधना के मार्ग पर निरन्तर बढ़ते रहे।

साहित्य और संगीत में निराला की रुचि प्रारम्भ से ही थी। किशोरावस्था के बाद दर्शनशास्त्र में भी उनकी रुचि बढ़ी और स्वामी रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानन्द की विचारधारा से विशेष प्रभावित हुए। महिषादल छोड़ने पर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रयत्नों से उन्होंने रामकृष्ण आश्रम कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'समन्वय' नामक पत्र के सम्पादक का कार्य मिला। सन् 1922 ई. में इन्होंने 'मतवाला' का प्रकाशन आरम्भ किया और कई वर्ष तक उसका सम्पादन करते रहे। 1930 में 'गंगा पुस्तक–माला', लखनऊ से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिका 'सुधा' के सम्पादक बने और लखनऊ में रहते हुए साहित्य–साधना करते रहे। सन् 1935 से 1950 तक वह लखनऊ, काशी, सीतापुर और प्रयाग के चक्कर लगाते रहे। इस बी इन्हें सम्मान भी मिला और पुरस्कार–पारिश्रमिक के रूप में धन भी। सन् 1947 में वसन्त पंचमी के दिन 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' ने समारोहपूर्वक इनकी जयन्ती मनाई और 1949 ई. में 'अपरा' पर उत्तर प्रदेश सरकार ने 2100 रुपये का पुरस्कार दिया। बहुतों ने इन्हें दान देना चाहा, परन्तु या तो उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया अथवा दान की राशि किसी अभावग्रस्त व्यक्ति या संस्था को दे दी। सन् 1950 में उनकी मानसिक स्थिति कुछ सुधरी और वह प्रयाग के दारागंज मोहल्ले में स्थायी रूप से रहने लगे। यहीं 15 अक्टूबर सन् 1961 को महाप्राण निराला का महाप्रयाण हुआ।

निराला का व्यक्तित्व इतना विलक्षण, प्राणवान और पौरुषयुक्त था कि उनके व्यक्तित्व की तुलना किसी अन्य कवि से नहीं की जा सकती। कदाचित् इसीलिए उन्हें विद्वानों ने 'महाप्राण निराला' कहा। कबीर के पश्चात् हिन्दी साहित्य में ऐसा विलक्षण व्यक्तित्व वाला साहित्यकार नहीं हुआ। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो

कुछ लिखा है, वह बहुत कुछ निराला के सम्बन्ध में भी सत्य है। परस्पर–विरोधी तत्वों के अद्‌भुत समन्वय के कारण द्विवेदी जी ने कबीर को नृसिंह सामंजस्यस दृष्टिगत होता है–स्वाभिमान और आत्म–त्याग, उद्दण्डता और विनम्रता, परुषता और मृदुता, क्रोध और करुणा, प्रवृत्ति और निर्वृत्ति का समन्वय उनके व्यक्तित्व को विलक्षण और साथ ही आकर्षक बना देता है। उनकी शारीरिक गठन ग्रीक देवताओं के समान थी। युवावस्था में यदि वह गर्वोन्नत आर्य लगते थे, तो वृद्धावस्थ्ज्ञा में महापूत ऋषि। उनके स्वभाव की विचित्रता सनक की सीमा तक बढ़ गई थी–कभी सिर के बाल और मूँछें मुड़ा लेते, तो कभी लम्बे केश और दाढ़ी रख लेते, कभी नंगे बदन और नंगे पैर सड़कों पर घूमते, तो कभी लुंगी और लम्बा कुर्ता पहन लेते, कभी कई दिन स्नान न करते, तो कभी इत्र की मालिश करवाते। करुणा, परदुःखकातरता और दानशीलता के उनके कार्य पौराणिक आख्यानों जैसे जगते हैं। अनेक बाद उन्होंने सर्दी में स्वयं ठिठुरते हुए अपनी नई रजाई या नया कम्बल भिखारियों को दे डाला और पुत्र कहने पर एक भिखारिणी को माँ का सम्मान और सहायता प्रदान की। फक्कड़पन के कारण हिन्दी के गौरव और अपने काव्य की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए गाँधी और नेहरू से भी उलझ पड़े। इस प्रकार, बहुमुखी प्रतिभा और प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व वाले निराला ने हिन्दी जगत में आतंक की सृष्टि की और सम्मान प्राप्त किया। इसीलिए उन्हें अमृत पुत्र, महाप्राण, क्रान्तिदृष्ट, दारागंज का सन्त और दानों का मसीहा कहा गया।

कालीदास, शेक्सपीयर और टैगोर के समान निराला की प्रतिभा बहुमुखी थी। वह मूल रूप से कवि थे, पर रेखाचित्र, कहानी, उपन्यास, निबन्ध और आलोचना के क्षेत्र में भी उनकी लेखनी गतिशील रही। उन्होंने अन्य भाषाओं से हिन्दी में अनुवाद भी किया। परिमल, अनामिका, गीतिका, अपरा और नये पत्ते उनकी स्फुट कविताओं के संग्रह है। तुलसीदास, राम की शक्तिपूजा और सरोज स्मृति उनकी लम्बी कविताएँ हैं। कहानी–संग्रहों के अतिरिक्त उन्होंने उपन्यास भी लिखे जिनमें अप्सरा, अलका, निरुपमा, चोटी की पकड़ प्रसिद्ध है। कुल्ली भाट और बिल्लेसुर बकरिहा में उनकी रेखाचित्रकला का परिचय मिलता है, तो उनके चार निबन्ध–संग्रहों और दो आलोचनात्मक कृतियों में उनका आलोचक और निबन्धकार रूप निखर उठा है।

निराला ने 'जन्मभूमि की वन्दना' शीर्षक कविता के साथ हिन्दी काव्य–मंच पर प्रवेश किया। कुछ समय पश्चात् 'जुही की कली' प्रकाशित हिन्दी काव्य को एक साथ दस वर्ष आगे बढ़ा दिया। निराला का काव्य छाया हुई जिसने वाद, रहस्यवाद और प्रगतिवाद, इन तीनों सोपानों से गुजरा है। छायावादी कविताओं में कल्पना की विदग्धता और भावों की सुकुमारता, गीतिका के लघु गेय गीतों में रहस्योन्मुखी प्रवृत्ति

के कारण आध्यात्मिक चिंतन और प्रगतिवादी कविताओं में दलित वर्ग के प्रति सहानुभूति का स्वर मुख्य है। 'अचैना' और 'आराधना' उनकी भक्तिपरक कविताओं का संग्रह है। इस प्रकार इनके काव्य में श्रृंगार की मादकता और उदात्त भावना, प्रकृति–अद्वैतवादी दृष्टिकोण तो मिलता ही है, 'जागो फिर एक बार' जैसी राष्ट्रीय भावों से युक्त वीर रस की कविताओं में ओजस्वी स्वर भी सुनाई देता है। साथ ही 'भिक्षुक' तथा 'विधवा' जैसी रचनाओं में करुणा की विकल रागिनी सुनाई देती है।

निराला स्वभाव से उन्मुक्त, फक्कड़ और विद्रोही थे। अतः उनके काव्य में रूढ़ियों के पाश काटने की प्रवृत्ति आरम्भ से ही मिलती है। उनकी रचनाओं में तत्कालीन मानव की पीड़ा, परतन्त्रता के प्रति तीव्र क्षोभ और अन्याय के प्रति उत्कट विद्रोह का स्वर आरम्भ से ही सुनाई देता हे। 'बादल राग' शीर्षक कविताओं में कहीं बादल से समाज में नवक्रान्ति उत्पन्न करने का आग्रह किया गया है तो कहीं भारत के जीर्ण–शीर्ण किसानों की आती पुकार सुनकर विप्लव मचाने का आवाहन किया गया है–

ए विप्लव के वीर

चूस लिया है उसका सार।

हाड़ मात्र ही हैं आधार।

ए जीवन क पारावार।

इसी सामाजिक क्रान्ति के स्वर को प्रखर बनाते हुए जागो फिर एक बार कविता में भारत की चिर–प्रसुप्त शक्तियों को झकझोरा गया है, शूरवीरों को उद्‌बोधन मंत्र दिया गया है–

जागो फिर एक बार

पशु नहीं वीर तुम, समय–शूर, क्रूर नहीं,

काल–चक्र में हो दबे, आज तुम राजकुंवर,

समर–सरताज।

राष्ट्रप्रेम की उदात्त भावना से अनुप्रेरित हो कवि ने भारत माता के साकार रूप की वन्दना की है–

भारति, जय–विजय करे, कनक शस्य कमल धरे,

लंका पदतल शतदल, गर्जितोर्मि सागर जल,

धोता शुचि चरण–युगल, स्तव कर बहु अर्थ–भरे।

इन्हीं विचारों से अनुप्राणित हो वह सरस्वती की वन्दना करते हुए याचना करते हैं कि वह कलुष एवं अन्धकार को हटाकर प्रकाश दे और

भारतवासियों को नवीन स्वर प्रदान करें। कवि भारत माता की विदेशी शासन से मुक्त करने के लिए बेचैन है और इसके लिए सर्वस्व बलिदान करने के लिए आतुर–

महाकाल के भी स्वर–शर सह

सकूँ, मुझे तू कर दृढ़तर

जागे मेरे उन में तेरी

मूर्ति अश्रुजल धौत विमल

क्लेद–युक्त, अपना तन दूँगा।

मुक्त करुँगा तुझे अटल।

तेरे चरणों पर देकर बलि।

सकल श्रेय–श्रम सिंचित फल।

निराला भारत की सामाजिक मान्यताओं, रूढ़ियों और अन्धविश्वासों से क्षुब्ध थे। अनाथ, असहाय और पीड़ित विधवा को देखकर उनके हृदय में करुणा की सरिता प्रवाहित हो उठी–

रोती है अस्फुट स्वर में–

दुःख सुनता है आकाश धीर

निश्चल समीर

कौन उसको धीरज दे सके

यह दुःख का भार कौन ले सके ?

समाज की भयंकर विषमता को देखकर ही निराला पत्थर तोड़ने वाली श्रमिक युवती के जीवन की करुणा गाथा को काव्यरूप देते हैं–

दिवा का तमतमाता रूप, उठी झुलसती हुई लू

रूई ज्यों जलती हुई भू, गर्द चिनगी छा गई,

प्रायः हुई दुपहर–वह तोड़ती पत्थर।

निराला का कोमल हृदय उस भिक्षुक को देखकर भी व्यथित हो उठता है जिसके पेट और पीठ भूख के कारण एक हो गए हें और जो मुट्ठी–भर दाने के लिए अपनी झोली फैलाता है–

पेट–पीठ दोनों मिलकर हैं एक

चल रहा लकुटिया टेक

मुट्ठी–भर दाने को, भूख मिटाने को

मुँह–फटी पुरानी झोली का फैलाता।

जीवन–भर सामाजिक विषमता, मानव की विवशता और पीड़ा से क्षुब्ध हो निराला का स्वर विद्रोह की ज्वाला भर माँ दुर्गा का आहवान करता है कि वह ताण्डव–नत्य कर वैषम्य के असुर का संहार कर समाज में समता स्थापित करे–

एक बार बस और नाच तू श्यामा

सामान सभी तैयार।

अब कवि कोमल राग–रागनियों के स्थान पर भैरवी राग सुनने के लिए व्यग्र है और जीण–शीर्ण प्राचीन को जलाकर नवजीवन और नवशक्ति का संचार करने की प्रार्थना करता है–

जला दे जीर्ण–शीर्ण प्राचीन, क्या करुँगा तन

जीवन–हीन

देवव्रत नरवर पैदा कर फैला शक्ति नवीन।

निराला ने सामाजिक विषमता और अन्याय के विरुद्ध भैरवी राग ही नहीं छेड़ा, प्रेम के गीत भी गाए हैं। इन गीतों में कहीं प्रेयसी के मादक प्रेम की मधुर झाँकी अंकित की गई है, तो कहीं प्रिय का पुनीत प्यार प्रिय के हृदय को आकर्षित करता है। 'जुही की काली' में पवन और काली के माध्यम से यौवनोदीप्त नायक–नायिका का चित्र अत्यन्त मधुर और मादक है–

विजन वन–वल्लरी पर,

सोई थी सुहाग–भरी।

नायक ने चूमे कपोल,

डोल उठी वल्लरी की लड़ी, जैसे हिंडोल

निद्रालस बंकिम विशाल नेत्र मूँदे रही–

किंवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिये।

कुछ गीतों में प्रेम–भावना मातृत्व–गर्व से परिपूर्ण होकर उस संध्या–सुंदरी के रूप में अभिव्यक्त हुई है जो जीवों को स्नेह का प्याला पिलाकर अपने अंक में सुला लेती है।

छायावादी काव्यधारा के प्रमुख स्तम्भ माने जाने वाले निराला ने प्रकृति के सुरम्य चित्रों का अंकन करने के साथ उसके भीषण रूप का भी चित्रण किया है। 'जुही की कली' और 'संध्या सुंदरी' में यदि उसका मधुर चित्र प्रस्तुत किया गया है, तो 'बादल राग' कविता में उसका रौद्र रूप अभिचित्रित हुआ है–

रुद्ध कोश है क्षुब्ध तोष

अंगना अंग से लिपटे भी

आतंक–अंक पर काँप रहे हैं

धनी वज्र–गर्जन से बादल।

प्रेम की कोमल अनुभूतियों का चित्रण निराला ने अधिकतर आध्यात्मिक परिवेश में किया है। ऐसे गीत छायावाद की अपेक्षा रहस्योन्मुखी अधिक हो उठे हैं। कहीं आत्मा और परमात्मा के ऐक्य को विभिन्न रूपों में प्रकट किया गया है–

तुम तुङ्ग हिमालय–श्रृंग और मैं चंचल गति

सुरसरिता

तुम विमल हृदय–उच्छ्वास और मैं कांत कामिनी कविता।

कहीं अज्ञात सत्ता के प्रति जिज्ञासा का भाव है–

हृदय में कौन जो छेड़ता बांसुरी।

और कहीं अज्ञात कल्पना–लोक में विचरण करने की कामना प्रकट की गई है

जहाँ नयनों से नयन मिलें,

ज्योति के रूप सहस्र खिले।

सदा ही बहती नव–रस धार,

वहीं जाना इस जग के पार।

कुछ गीतों में आत्मा का परमात्मा के लिए अभिसार, मिलन और वियोग की सजीव अभिव्यक्ति भी मिलती है।

निराला के काव्य में राष्ट्रीयता के भाव भी उपलब्ध होते हैं। उन्होंने 'मातृभूमि' की वन्दना' शीर्षक रचना से ही हिन्दी काव्य के प्रांगण में प्रवेश किया था। अन्य अनेक गीतों में भी भारत के प्राचीन शौर्य, ज्ञान–गौरव और वैभव का वर्णन है। 'महाराज शिवाजी का पत्र' तथा 'जागो फिर एक बार' ऐसी ही कविताएँ हैं। उनके प्रबन्ध–काव्य 'तुलसीदास' में समाज में व्याप्त भौतिकता और संस्कृति–पराङ्गमुखता पर व्यंग्य करने के साथ–साथ जीवन की ऊर्ध्व गति प्राप्त करने का संदेश दिया गया है। इसी प्रकार, 'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने पौराणिक आख्यान द्वारा युग–चेतना को झकझोरा है, विदेशी दानव पर विजय पाने के लिए शक्ति–संचय करने का संदेश दिया है।

सामाजिक चेतना को झकझोरने के लिए निराला ने उद्‌बोधन–गीत ही नहीं लिखे, तीव्र व्यंग्य का भी आश्रय लिया है। पूँजीवपतियों, अवसरवादियों, शोषक धनिकों और तथाकथित समाज–सेवी नेताओं की उन्होंने अच्छी खबर ली है। यह व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति ''कुकुरमत्ता, 'नये पत्ते', 'बेला' और 'अणिमा' में अधिक प्रखर हो उठी है। 'कुकुरमुत्ता' में उच्च वर्ग के उन पूँजीपतियों को फटकारा गया है, जो मजदूर और किसान की खून–पसीने की कमाई पर गुलछर्रे उड़ाते हैं–

अबे सुन बे गुलाब,

भूल मत, गर पायी खुशबू, रंगो–आब,

खून चूसा डाल का तूने अशिष्ट

डल पर इतरा रहा कैपिटलिस्ट।

'रानी और कानी' कविता में उन्होंने समाज की विवाह–व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया है क्योंकि समाज में कन्या के विवाह के लिए सौन्दर्य को प्रमुख स्थान दिया जाता है। 'बेला' में कवि ने गंगा–किनारे बैठे निठल्ले साधुओं के प्रति जनता की अन्धश्रद्धा पर व्यंग्य किया है और 'दान' शीर्षक कविता में ब्राह्मण द्वारा बन्दरों को पूए खिलाते और पास ही खड़े भूखे भिखारियों के प्रति उपेक्षा प्रदर्शित करते दिखाकर रुढ़ियों और अंधविश्वासों पर करारी चोट की है।

निराला के काव्य में वन्दना–गीतों का प्रचुर महत्व है। आरम्भ में ही उन्होंने भारत माता के साकार रूप की वन्दना की थी–

भारति जय–विजय करे, कनक शस्य कमल धरे।

लंका पद–तल, शत–दल, गर्जितोर्मि सागर जल।

धोता शुचि चरण–युगल, कर बहु अर्थ भरे।

मुकुट शुभ्र हिम–तुषार, प्राण प्रणव ओंकार,

ध्वनित दिशा में उदार, शतमुख शतरव मुखरे।

माँ सरस्वती की वंदना करते हुए भी कवि समस्त बंधनों को काटने, कलुष और अंधकार हटाकर प्रकार भरने और भारतवासियों को नवगति, नवलय और नवस्वर प्रदान करने की याचना करता है। 'आराधना' काव्य–संग्रह में निराला ने भगवद्–भक्ति में विभोर होकर सत्यं–शिवं–सुन्दरं की आराधना की है।

निराला के काव्य में कल्पना और भावुकता, राष्ट्रीय भावना का ओजस्वी स्वर और समाज के यथार्थ चित्रण की प्रखरता, सभी मिलते हैं। उनकी भाषा भी विषय और प्रसंग के अनुरूप बदलती रहती है। छायावादी–रहस्यवादी और संस्कृति–प्रधान कविताओं में संस्कृत के तत्सम शब्दों, प्रतीकात्मक और लाक्षणिक शब्दावली तथा समास–योजना की प्रवृत्ति मिलती है। वह भाषा की सरलता पर बल नहीं देते थे। एक स्थान पर उन्होंने लिखा भी है– "साहित्य में भावों की उच्चता का भी विचार रखना चाहिए, भाषा भावों की अनुगामिनी है।" अपनी इसी धारणा के अनुरूप उन्होंने भाषा को सर्वत्र भावों के अनुकूल ढाला है। जहाँ भाव अधिक प्रौढ़ ओर अधिक गम्भीर है, वहाँ उनकी भाषा भी अपेक्षाकृत अधिक प्रौढ़, गम्भीर और ओजपूर्ण है। इसके विपरीत जहाँ उनके काव्य में जन–जीवन का चित्रण है, वहाँ उनकी भाषा भी सरल और व्यावहारिक हो गई है। सम्पूर्ण निराला–काव्य का अनुशीलन करने पर हम उनके काव्य में चार प्रकार की भाषा–शैली पाते हैं।

1. गुरु–गम्भीर प्रौढ़ भाषा–शैली जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्द और दीर्घ समासान्त पदावली का प्रयोग हुआ है–

रावण प्रहार दुर्वार विकल वानर दल–बल

मूर्छित सुग्रीवांगद विभीषण गवाक्ष गय नल।

उद्बोधन–गीतों में ओजपूर्ण भाषा का प्रयोग हुआ है–

जागो–जागो, आया प्रभात

बीती वह बीती अंधरात

झरता–झर ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वांचल।

प्रेमी–हृदय के मार्मिक उद्गारों और प्रकृति के सुरम्य चित्रों को प्रस्तुत करते समय निराला की भाषा सरल सुबोध और कोमलकांत पदावली के कारण मधुर हो उठी है। उसमें लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता के साथ–साथ संगीतात्मकता भी है। 'गीतिका' के मधुर गीतों में मधुर तान, लय

और झंकार से पाठय को लोकत्तर आनन्द की उपलब्धि होती है–

वर दे, वीणा वादिनि वर दे।

प्रिय स्वतंत्र रव अमृत मंत्र नव

भारत में भर दे।

निराला की भाषा का सप्राण बनाने में ध्वन्यात्मकता या नाद–सौन्दर्य का भी पर्याप्त योगदान रहा है। 'बादल राग' कविता पढ़ते समय लगता है जैसे बादलों का गुरु–गम्भीर गर्जन सुनाई दे रहा हो–

झूम–झूम मृदु गरज–गरज घन–घोर

राग अमर अमब्र में भर निज रोर।

जीवन का यथार्थ चित्र अंकित करने वाली पंक्तियों में सरल–सुबोध भाषा का प्रयोग हुआ है, परन्तु उनकी यह भाषा सरल–सीधी होते हुए भी सपाट–बयानी की हद को स्पर्श नहीं करती। 'विधवा' कविता में विधवा की तुलना के लिए जिन उपमानों की योजना की गई है, वे सुबोध होते हुए भी परिष्कृत और सुष्ठु है–

वह इष्ट–देव के मन्दिर की पूजा–सी।

वह दीप–शिखा–सी शान्त, भाव में लीन।

वह क्रूर काल ताण्डव की स्मृति–रेखा सी।

वह टूटे तरु की छुटी लता–सी दीन।

जिन स्थलों पर जीवन का जीता–जागता चित्र अंकित किया गया है, वहाँ भाषा और भी अधिक सरल हो गई है। सरल होते हुए भी यह भाषा पाठक पर वांछित प्रभाव डालती है। भिक्षुक का चित्र पाठक के कलेजे को भी दो टूक कर देता है–

पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक

चल रहा लकुटिया टेक

मुट्ठी भर दाने को–भूख मिटाने को

इसी प्रकार, निम्न पंक्तियों में कवि की निराशा, अकेलापन और आसन्न भय सरल शब्दावली में मूर्तिमान हो उठा है। भाषा की प्रवाहयुक्त तरलता इस प्रभाव को और भी सघन बना देती है–

मैं अकेला, मैं अकेला

आ रही मेरे गगन की सांध्य–बेला

इसमें उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। निराला ने सामाजिक अनाचार, शोषण और समाज–विरोधी कार्यों के विरुद्ध अपना क्षोभ और आक्रोश प्रकट करने के लिए ऐसी ही भाषा का प्रयोग किया है। कहीं–कहीं उर्दू शब्दों की भरमार खटखटाने लगती है। कबीर के समान

निराला भाषा के डिक्टेटर है। भाषा उनके सामने लाचार नजर आती है। उन्होंने भावों और विचारों के अनुरूप भाषा को नई भंगिमा, नया तेवर प्रदान किया है–कहीं प्रौढ़ प्रान्जल है, कहीं मृदुल और कोमल, कहीं तीक्ष्ण और कटु। इस प्रकार भाषा उनके इंगितों पर नाचती हुई दृष्टिगत होत है।

निराला ने अलंकार के लिए अलंकारों का प्रयोग नहीं किया है। काव्य में सर्वत्र रूपों और भावों के संश्लिष्ट चित्र पर बल देने के कारण अलंकार स्वतः उनके काव्य में आ गए हैं और अप्रस्तुत–योजना ने भाव, विचार, वस्तु और घटना का ऐसा मनोहर, मार्मिक चित्र अंकित कर दिया है कि कभी विस्मृत नहीं हो सकता। निराला काव्य के लिए मूर्तिकला की सहायता आवश्यक मानते थे, अतः अलंकारों की सहायता से उन्होंने अपने काव्य में अत्यन्त सजीव और मार्मिक शब्द–मूर्तियाँ अंकित की हैं। वे शब्द–मूर्तियाँ कहीं लघु हैं और कहीं विराट। इस मूर्ति–सृष्टि के लिए वह कभी उपमा का सहारा लेते हैं, तो कभी रूपक का। 'विधवा' कविता में उपमाओं के द्वारा ही कवि ने विधवा की पवित्रता, दीनता और दुर्भाग्य का प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत किया है। उपमान चुनते समय उनकी दृष्टि प्रभाव–साम्य पर अधिक रहती है। रूपक अलंकार द्वारा भी उन्होंने अत्यन्त सुन्दर शब्द–चित्रों का निर्माण किया है। छोटे निरंग रूपकों के द्वारा लघु चित्र प्रस्तुत किए गए हैं, जैसे–

स्नेह निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है।

इस पंक्ति में स्नेह में निर्झर का आरोप कर कवि ने स्नेहहीन हृदय का मार्मिक चित्र अंकित किया है। इसी प्रकार, रत्नावली के शब्दचित्र में रूपक की सहायताा से रत्नावली का प्रभावशाली वर्णन किया गया है–

बिखरी छूटी शफरी–अलकें
निष्पात नयन नीरज पलकें

परम्परित रूपकों और सांग–रूपकों के द्वारा भी कवि ने सुन्दर और मार्मिक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत

किए हैं। रत्नावली में शारदा का आरोप करते हुए कवि ने अत्यन्त मनोरम कल्पना की है–

देखा, शारदा नील–वसना
हैं सम्मुख स्वयं रशना
जीवन समीर निःश्वस्ना, वरदात्री।
वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर
फूटी तर अमृताक्षर निर्झर
यह विश्व–हंस हैं चरण सुघर जिस पर श्री।

निराला के काव्य में मानवीकरण, समासोक्ति, रूपकातिश्योक्ति, संदेह और ध्वन्यर्थ–व्यंजना अलंकारों का प्रयोग भी हुआ है। इन सभी अलंकारों ने कवि के भावों को अधिक प्रभविष्णु और प्रेषणीय बना दिया है।

निराला ने रूप और भाव चित्रण के लिए प्रतीकों का भी सहारा लिया है। उनके अधिकांश प्रतीक प्रकृति से चुने गए हैं। उनकी प्रतीक–योजना की विशेषता है रूप–चित्रण के साथ–साथ भाव–चित्र को भी साकार कर देना। 'जुही की कली' में जुही और पवन का प्रतीक नवोढ़ा नायिका का सौन्दर्य–चित्र ही प्रस्तुत नहीं करता, उसके भावों का भी परिचय देता है। 'बादल राग' कविता में बादल कहीं विप्लव करने वाले क्रान्तिकारी का प्रतीक है, कहीं सेवारत देशभक्त का, तो कहीं चंचल सुकुमार शिशु का। इन प्रतीकों के द्वारा कवि अपने हृदयस्थ भावों को सफलतापूर्वक अभिव्यक्त कर पाया है। निराला के प्रतीकों में उनकी विराट कल्पना का साक्षात्कार तो होता ही है, वह अपनी अनुभूति को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करने में भी सफल रहे हैं।

निराला स्वभाव से उन्मुक्त, आनन्दवादी और किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध न मानने वाले कवि थे। अतः उन्होंने काव्य के लिए छन्द को आवश्यक नहीं माना। आरम्भ में विरोध सहते हुए भी उन्होंने मुक्त छन्द का प्रयोग किया। हिन्दी कविता को अलंकार और छन्दों के पाश से मुक्त करने का श्रेय निराला को ही है, जिसके प्रति श्रृद्धांजलि अर्पित करते हुए पंत जी ने लिखा था–

खुल गए छन्द के बन्ध प्रास के रजत पाश।

उनके छन्दों में न मात्रा का विचार है और न लय का, सर्वत्र प्रवाह का आग्रह है। जिस समय सम्पूर्ण हिन्दी जगत् मात्रिक और वर्णिक छन्दों में कविताएँ लिख रहा था, उस समय निराला ने स्वछन्द छन्द में काव्य–प्रणयन कर युगान्तरकारी कदम उठाया। अतः इन्हें मुक्त छन्द का आदि प्रवर्तक कहना उचित ही है।

निराला छायावाद के प्रमुख स्तम्भ तो थे ही प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के प्रवर्तन में भी उनका पर्याप्त योगदान था। रूढ़ियों के पाश काटने और कविता को स्वतंत्र बनाने में उनका योगदान अविस्मरणीय है–

छन्द बन्ध ध्रुव तोड़, फोड़कर पर्वत कारा।

अचल रूढ़ियों की, कवि! तेरी कविता धारा।

संदर्भ

1. छायावाद का सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन – कृष्ण विमल, पृ. 112
2. निरालाः कृति से साक्षात्कार–नंदकिशोर नवल, पृ. 82
3. कवि निराला–नंद दुलारे बाजपेई, पृ. 62
4. महाप्राण निराला – गंगा प्रसाद पाण्डेय, पृ. 69
5. निराला और पन्त काव्य के आध्यात्मिक प्रेरणा–श्रोत–चन्दा देवी, पृ. 115
6. निरालाः आत्महंता आस्था – दूधनाथ सिंह, पृ. 139
7. निराला काव्य की छवियां – नंदकिशोर नवल, पृ. 159
8. हिंदी साहित्य का इतिहास–रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 28
9. निराला और मुक्ति बोधः चार लम्बी कविताएं–नंदकिशोर नवल, पृ. 83
10. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास – बच्चन सिंह, पृ. 98
11. प्रगतिवादी हिंदी साहित्य का इतिहास – कर्ण सिंह चौहान, पृ. 112
12. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह, पृ. 141

Copyright © 2017, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.